शोध सार

आदिवासी समाज एक शांतिप्रिय व प्रकृतिजीवी समाज है। आदिवासी जल-जंगल-ज़मीन की हमेशा से रक्षा करते आए हैं। लेकिन जातिवादी-पूंजीवादी समाज ने आदिवासियों के जीवन में तबाही मचाने की हमेशा कोशिश की है। इतिहास गवाह है कि इस मूलनिवासी समाज ने कभी हार नहीं मानी, कभी कोई समझौता नहीं किया बल्कि अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए इन्होंने हमेशा प्रतिरोध का रास्ता अपनाया। आज बदलते समय में इनका जीवन और ज्यादा मुश्किलों से घिरता जा रहा है। इनका जीवन संघर्ष बढ़ता जा रहा है। इन्हीं संघर्षों की सुंदर गाथा है- पीटर पॉल एक्का का हिंदी उपन्यास 'मौन घाटी' और बिभूति पट्टनायक का ओड़िया में लिखा हुआ उपन्यास 'जंगल आग'।

आदिवासी जीवन संघर्ष को लेकर आदिवासियों के निजी जीवन, उनके समक्ष उपस्थित चुनौतियों, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, आदिवासी स्त्री संघर्ष, प्रतिरोध का स्वर और उनकी संस्कृति में आ रहे बदलाव आदि स्थिति को लेकर इन दोनों रचनाओं में काफी समानता दिखाई देती है। इन दोनों कृतियों में आदिवासियों का निजी जीवन सजीवता के साथ चित्रित हुआ है। उनके जीने के तौर-तरीके, बात-व्यवहार, खान-पान, पहनावा, रीति-रिवाज, पर्व-त्यौहार, पारंपरिक नृत्य-संगीत, उनकी कला, उनका मूल स्वभाव तथा उनके विचार-व्यवहार आदि का सुंदर वर्णन इन उपन्यासों में हुआ है। आदिवासी प्रकृति-पूजक होते हैं और सादगी भरा जीवन जीते हैं। जंगल उनके लिए माँ समान है। हालांकि जंगल में उन्हें अनेक संकटों का भी सामना करना पड़ता है। लेकिन आदिवासी स्त्री-पुरुष, बच्चे-बुजुर्ग सब बहादुर होते हैं। वे हर स्थिति में लड़ते हैं, पीछे नहीं हटते। इसका वर्णन इन दोनों उपन्यासों में मिलता है। आदिवासी अपने पर्व-त्यौहार और विशेष अवसर पर पारंपरिक पोषाक धारण करके सामूहिक नृत्य-संगीत में हिस्सा लेते हैं। उत्सव आदिवासी समाज का अनिवार्य अंग है। ऐसे कई दृश्य 'जंगल आग' और 'मौन घाटी' में आए हैं।

पूंजीवादी औद्योगिकीकरण ने इनके सामने आजीविका का गंभीर संकट पैदा कर दिया है। उन्हें हर जगह अलग-अलग तरह के शोषण का सामना करना पड़ता है। जो आदिवासी इसका विरोध करता है, उसकी हत्या कर दी जाती है। उनकी महिलाओं को शारीरिक शोषण का शिकार होना पड़ता है। पढ़ने-लिखने और नौकरीपेशा आदिवासी भी जाति और आरक्षण के नाम पर उत्पीड़न व भेदभाव के शिकार होने के लिए मजबूर हैं। फिर भी वे अपने समाज के लिए संघर्ष करते रहते हैं। दोनों उपन्यासों में आदिवासियों को ऐसे संघर्ष कदम-कदम पर करने पड़ते हैं। उन्हें अपनी ही धरती पर परायापन देखना और झेलना पड़ता है। इन दोनों उपन्यासों ने इसे अच्छे ढंग से दिखाया है।

आधुनिकता तथा बाजारवाद आदिवासी संस्कृति का लगातार नुकसान कर रहे हैं। परिस्थिति विशेष के चलते कई बार आदिवासी अपनी संस्कृति को भूलाकर दिकुओं की संस्कृति को अपनाने लगते हैं। यह सब बाहरी प्रभाव के कारण है। ब्राह्मणी संस्कृति तेज़ी से आदिवासियों के जीवन को प्रभावित कर रही है। ऐसे परिवर्तनों के तमाम चित्र 'जंगल आग' और 'मौन घाटी' उपन्यासों में आए हैं। इतिहास गवाह है कि आदिवासी अन्याय-शोषण के खिलाफ हमेशा से प्रतिरोध करते आये हैं। इन दोनों उपन्यासों के पात्र भी अपने हक के लिए संघर्ष करते नजर आते हैं। इसके लिए उन्हें अपनी जान की कुर्बानी भी देनी पड़ती है, लेकिन वे पीछे नहीं हटते, लगातार लड़ते हैं। इन उपन्यासों में आदिवासी स्त्रियाँ अपने अस्तित्व और स्वाभिमान के लिए वर्चस्ववादी समाज से निरंतर संघर्ष करती दिखाई देती हैं। इसके लिए उन्हें शोषण-अन्याय भी झेलना पड़ता है, पर वे लड़ती हैं, मुक़ाबला करती हैं, कभी हार नहीं मानतीं।

कुल मिलाकर पीटर पॉल एक्का का 'मौन घाटी' और बिभूति पट्टनायक का 'जंगल आग' दोनों ही उपन्यास आदिवासी जीवन संघर्ष को अत्यंत प्रमाणिकता के साथ चित्रित करते हैं। इन कृतियों की भाषा सहज-सरल और बोधगम्य हैं। इनमें आदिवासी जीवन और उनके संघर्षों का स्वाभाविक चित्रण विविधता और सजीवता के साथ किया गया है। इससे इस समुदाय और उसके जीवन संघर्ष को और नजदीक से जानने-समझने का अवसर मिलता है।